कहानी

माफ करें, आप एक स्कूल की व्यस्त प्रधानाध्यापिका हैं और आपको छुट्टी की अर्ज़ियों जैसी चुस्त चिट्ठियां पढ़ने की आदत है। पर एक कलाकार को बहकने की

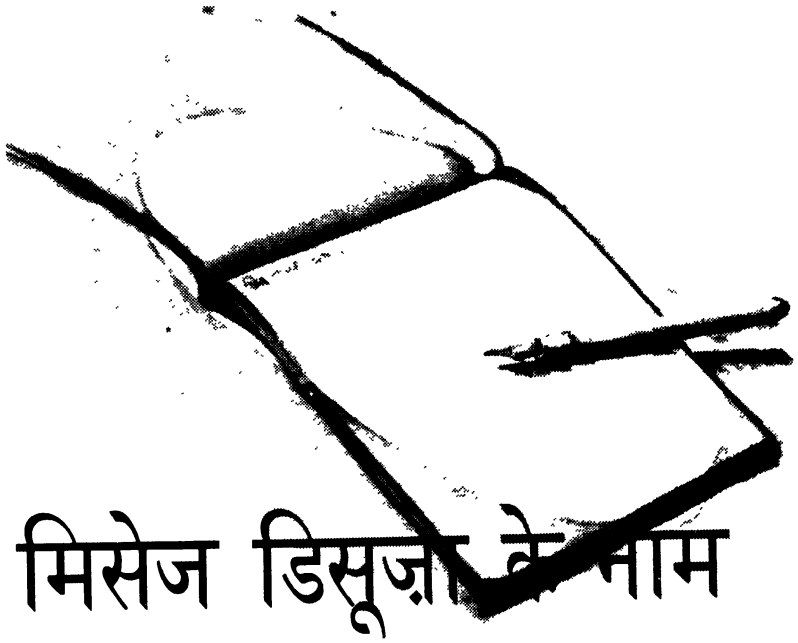

मिसेज डिसूज़ा के नाम

● अलका सरावगी

आदत पड़ ही जाती है, जीवन को एक नए सिरे से समझने-जानने के लिए इधर-उधर भटकना उसकी लगभग मजबूरी होती है कि न जाने कहां क्या मिल जाए। इसलिए थोड़ी छूट मैं आपसे ज़रूर चाहूंगी॥

प्रिय श्रीमती डिसूज़ा,

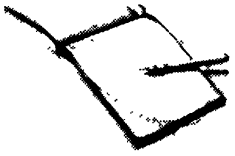

अचानक बैठे-बैठे मेरा मन हुआ कि आपको पत्र लिखूं, हालांकि कल आपसे मिलने के बाद अब तक मेरे दिमाग में ऐसा कोई ख्याल ही नहीं था। मुझे लगता है कि लिखे हुए शब्द बोले हुए शब्दों से ज़्यादा सच बोल पाते हैं.....कल आपसे बातें करते हुए मैंने महसूस किया कि मेरे शब्द अपने आप बदल जाते थे..... यहां तक कि कई बार मैं बोलना कुछ और चाह रही थी, पर बोले कुछ और जा रही थी। दरअसल कुछ छिपा लेने की कोशिश से बचना आमने-सामने बैठे हुए काफी मुश्किल होता है और साथ-ही-साथ यह कोशिश भी तो जारी रहती है कि हम भांप लें कि सामने वाला हमसे क्या सुनना चाहता है। लिखते वक्त तो सिर्फ अपने से टकराना होता है....।

माफ करें, आप एक स्कूल की व्यस्त प्रधानाध्यापिका हैं और आपको छुट्टी की अर्ज़ियों जैसी चुस्त चिट्ठियां पढ़ने की आदत है। पर एक कलाकार को बहकने की आदत पड़ ही जाती है, जीवन को एक नए सिरे से समझने-जानने के लिए इधर-उधर भटकना उसकी लगभग मजबूरी होती है कि न जाने कहां क्या मिल जाए। इसलिए थोड़ी छूट मैं आपसे ज़रूर चाहूंगी।

वंदिता – मेरी छह साल की चुलबुली बेटी। कितना जीवन है उसमें। मैं उसे देखती जाती हूं और सोचती हूं कि बड़े होने पर यह आनंद कहां गुम हो जाता है? क्यों हम इतने गंभीर, इतने उदास, इतने शुष्क होते जाते हैं? पर आप कहती हैं कि उसे ऐसा नहीं होना चाहिए। वह बहुत शैतान है.....किसी की बात नहीं सुनती.....पूरी कक्षा को 'डिस्टर्ब' करती है.....बहुत बातूनी है.....पढ़ाई में ध्यान नहीं देती। इतना ही नहीं, आपका ख्याल है कि इसका कारण मैं ही हूं.....मैं अपने संगीत के कार्यक्रमों में व्यस्त रहती हूं.....उस पर पूरा ध्यान नहीं देती.....इसीलिए वह सबका ध्यान अपनी तरफ खींचने के लिए ही इतनी शैतानियां करती है। आह! कितनी आसानी से आप एक-के-बाद एक आरोप मुझ पर लगाती जाती हैं.....आपकी काले फ्रेम के चश्मे में से झांकती सिलवटों से घिरी आंखें जैसे मेरे आर-पार चली जाती हैं.....आप अपने निकाले हुए निष्कर्ष मेरे मुंह से सुनना चाहती हैं.....आप 'कनफेशन' चाहती हैं.....और लीजिए मेरी आंखों में आंसू डबडबा आते हैं। मैं जानती हूं कि आप इन्हें पश्चाताप के आंसू समझ रही हैं। आपके चेहरे पर आत्मसंतोष आकर आपकी तनी हुई रेखाओं को ढीला कर देता है। मैं आपको अपने आंसुओं का राज़ नहीं बताती.....उनके कारण ही मुझे आपसे मुक्ति मिल जाएगी, यह समझकर चुप रहती हूं।

चुप तो आजकल मैं अक्सर रहती हूं, मिसेज डिसूज़ा। क्योंकि मैंने देख लिया है कि किसी को कुछ समझाने का अर्थ है

कि आप एक सस्ते किस्म की अखाड़ेबाज़ी में उतरकर अधिक-से-अधिक नंबर लेने की चेष्टा करें। मुश्किल तो यह है कि कितने भी नंबर आप ले लें, तकलीफ कम नहीं होती..... और जितना नज़दीक का व्यक्ति हो, तकलीफ उतनी ही अधिक होती है। इसीलिए अभी उस दिन मैंने अपनी बहन नीलिमा से भी कुछ नहीं कहा। नीलिमा ने वंदिता की स्कूल की डायरी देखकर मुझसे कहा, "दीदी, तुम बुरा मत मानना, पर क्या तुम्हें बुरा नहीं लगता कि वंदिता की डायरी में दो जगह लिखा है कि वह कविता याद करके नहीं आई और एक जगह लिखा है कि वह कलर-पेंसिल नहीं लाई।" मैं उसे कैसे समझाती, मिसेज डिसूज़ा कि दस महीने में तीन बार की भूल बाकी दिनों की मेहनत को बेकार नहीं कर सकती। मन तो मेरा हुआ कि उससे कहूं, 'नीलिमा क्या तुम उन अलिखित शिकायतों का ब्योरा भी रखती हो, जो तुम्हारा मन तुमसे रोज़ करता होगा....' 'अगर मैं अपने सितार को शादी के बाद ताक पर न रख देती, तो क्या पता मैं....।' पर मैं चुप रही। मैं उससे उसकी यह खुशी नहीं छीनना चाहती थी कि उसके बच्चे की डायरी में कोई शिकायत कभी नहीं लिखी गई।

ऐसा क्यों होता है मिसेज डिसूज़ा? आप लोग सब मुझे क्यों बार-बार कठघरे में खड़ा करना चाहते हैं? क्यों मेरे इर्द-गिर्द के लोग मुझे हर वक्त बताते रहते

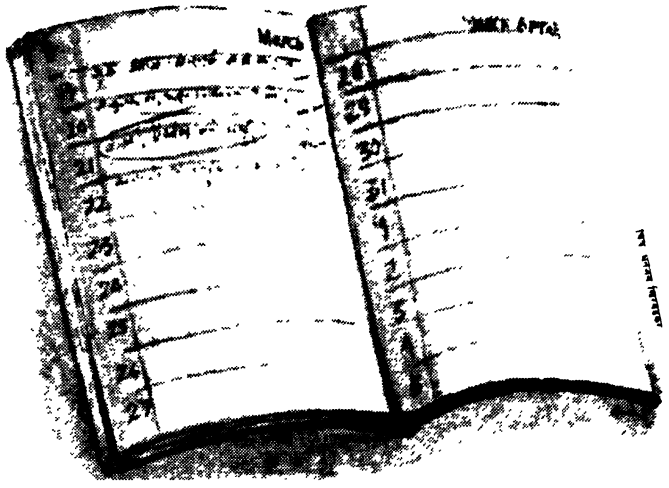

हैं कि फलां औरत अपने बच्चे के पीछे दो घन्टे तक खाना लिए-लिए घूमती रहती है क्योंकि वह खाना नहीं चाहता.....फलां औरत अपने पांच साल के बच्चे को चार घंटे पढ़ाती है....। क्या आप भी औरों की तरह यही सोचती हैं कि औरतों को अपने लिए जीने का कोइं अधिकार नहीं? क्या मेरे जीवन में वंदिता और संगीत एक साथ नहीं रह सकते? क्यों नहीं रह सकते, मिसेज डिसूज़ा..... मेहनत मुझे करनी होती है, परेशानी मुझे होती है – किसी और को उससे क्या मतलब है? वंदिता जब कभी बीमार होती है, तो क्यों सब मुझे अजीब-सी निगाहों से देखने लगते हैं? यहां तक कि वंदिता के पापा भी मुझे कहते हैं कि उसका ध्यान रखना.....जैसे कि यदि वे नहीं बोलेंगे तो मैं ध्यान नहीं रखूंगी। औरों की तो छोड़िए, आपने कितनी आसानी से निष्कर्ष निकाल लिया कि सारी मुसीबतों की जड़ मेरा संगीत है.. . . . जबकि आप दाखिले के समय इंटरव्यू में कितनी खुश हुई थीं यह सुनकर कि मैं रेडियो की नामी कलाकार हूं। मुझे लगता है, मिसेज डिसूज़ा कि सब लोग नतीजे तो चाहते हैं, उन पर पीठ भी

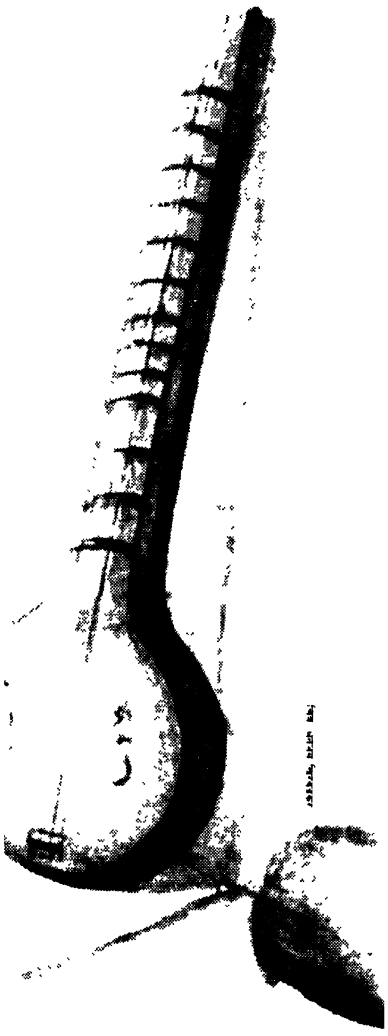

थपथपाते हैं, उन नतीजों तक पहुंचने के लिए जो यात्रा करनी होती है, उनमें कांटे बिछाने से नहीं चूकते।

कभी-कभी जब मैं बहुत थक जाती हूं, मिसेज डिसूज़ा, तब मैं अपने आत्मसम्मान को भूलकर यह बात सफाई के तौर पर कह डालती हूं कि मेरे लिए वंदिता से अधिक महत्वपूर्ण कुछ भी नहीं है। मैं कल आपको भी कह ही देती, पर मैं इतनी स्तब्ध हो गई थी कि आपको यह भी नहीं कह सकी। दो-तीन साल पहले यह बात किसी से कहना मुझे अपमानजनक लगता था, पर मैंने देखा कि इस तरह की बात सुनने से लोगों को तसल्ली मिल जाती है। सचमुच मेरे लिए वंदिता से महत्वपूर्ण कुछ नहीं है.....लेकिन मिसेज डिसूज़ा, आप सोचिए कि हम अपने बच्चों के लिए कितने ाांक्षी हैं.....उन्हें कुछ बताने के लिए कितनी तपस्या करते हैं.....एक दिन बच्चा कविता याद न करे तो हमें लगता है कि उसकी दुनिया अंधकारमय हो जाएगी.....लेकिन यदि हम अपनी प्रतिभा, अपनी ऊर्जा का कुछ उपयोग नहीं करते, तो हम अपने बच्चों को कैसे सिखाएंगे कि जीवन नष्ट करने के लिए नहीं है? इस तरह तो हम उन्हें अधिक-से-अधिक अपने बच्चों के लिए महत्वाकांक्षी होना ही सिखाएंगे। आप सच मानिए, मैंने सब लोगों की निगाहों को झेलत-झेलते भी यह विश्वास बनाए रखा है कि वंदिता जीवन को पूरी तरह जीने की मेरी इच्छा और संघर्ष से ज़रूर प्रेरणा लेगी। मुझे हमेशा लगा है कि मेरा अपना संघर्ष भी उसकी शिक्षा और संस्कार का ही एक हिस्सा है।

माफ कीजिएगा, मिसेज डिसूज़ा, शायद आपको लग रहा होगा कि मैं अपनी खामियों को छिपाने के लिए कितने तर्क जुटा रही हूं। हां, खामियां तो रह ही जाती हैं.....चाहते तो हम सब यही हैं कि जीवन इस तरह मे पूर्ण और चरम उत्कृष्ट हो, लेकिन किस कीमत पर? न जाने कहां-कहां से छोटे-छोटे सैकड़ों काम निकल आते हैं – वंदिता के मोज़ों में इतनी जल्दी-जल्दी छेद हो जाते हैं.....स्कूल की फीस भरने का समय कितनी जल्दी-जल्दी आ जाता है.....उसके बाल लम्बे होकर आंखों में आने लगते हैं – इनके अलावा रोज़ाना के तो पचीसों काम हैं ही। किसी काम को टाला नहीं जा सकता.....कई बार मैं यह सोचने लगती हूं, मिसेज डिसूज़ा कि छिटपुट कामों को आखिर हम इतना महत्व देते ही क्यों हैं – क्यों हम इस तरह के कामों को टाल नहीं पाते.....क्यों वंदिता के घिसे हुए जूतों को देख मां मुझे इस तरह देखने लगती है?

अभी उस दिन पार्क में वंदिता के हमउम्र जो गरीब बच्चे खेल रहे थे, उनके कपड़ों का एक ही रंग था – बदरंग या मटमैला। मैं सोचती रही कि ये बेचारे बिना कलर-पेन्सिलों के कैसे रंगों की पहचान सीखते हैं.....आप बताइए, मिसेज डिसूज़ा, ज़रूरी और गैरज़रूरी में कैसे फर्क होता है? मुझे तो कुछ समझ में नहीं आता।

समझ में तो खैर मुझे और भी बहुत कुछ नहीं आता, जैसे कि मुझे यह भी

समझ नहीं आता कि इतने हंसने-खिलखिलाने वाले शैतान बच्चों के बीच रहकर भी आप इतनी गंभीर कैसे रहती हैं.....कई बार तो मुझे आपको देखकर ऐसी घबराहट होती है कि मुझे अपने को याद दिलाना पड़ता है कि मैं आपकी छात्रा नहीं, बल्कि एक छात्रा की मां हूं। आप बुरा मत मानिएगा, मिसेज डिसूज़ा, लेकिन क्या आपको यह खतरा नहीं लगता कि आपको इस तरह देखकर कहीं बच्चे यह समझ लें कि ज़िन्दगी ऐसी मनहूस चीज़ है कि मुस्कराना बहुत कठिन है।

एक और बात जो मेरी समझ में नहीं आती, मिसेज डिसूज़ा कि बच्चों के उठने-बैठने, खेलने-खाने में अनुशासन के नाम पर इतनी सेंसरशिप लगाना कहां तक उचित है.....हम बच्चों को जल्दी अपने जैसा क्यों बना लेना चाहते हैं.....आखिर हम कैसी दुनिया के लिए उन्हें तैयार कर रहे हैं.....कभी-कभी तो मुझे लगता है कि हम भविष्य से बेतहाशा डरे हुए हैं। इसलिए हम अपने बच्चों को सब-कुछ सिखाकर हर तरह से तैयार करना चाहते हैं ताकि वे ज़िन्दगी की दौड़ में पीछे न रह जाएं। लेकिन न जाने क्यों मिसेज डिसूज़ा मुझे लगता है कि हमारे बच्चे और सब बातों के साथ हमसे यह डर भी सीख लेंगे। ज़रा सोचिए मिसेज डिसूज़ा, हम अपनी सारी ऊर्जा बच्चों के सहज, निर्दोष आनंद को नष्ट करने में तो नहीं लगा रहे? मेरी एक सहेली अब बहुत खुश है कि उसका लड़का नए स्कूल में आने के बाद बदल गया है.....पहले कोई उसे मार देता था, तो वह चुपचाप सह लेता था – कोई उससे कुछ मांग लेता, तो वह बिना सोचे-समझे अपनी चीज़ पकड़ा देता था। मेरी सहेली अक्सर कहा करती थी, "ऐसा नरम दिल है, न जाने कैसे इसकी ज़िन्दगी चलेगी।" अब नए स्कूल में टीचर ने सिखाया है कि 'कोई तुम्हें एक थप्पड़ मारे, तो तुम उसे चार थप्पड़ मारो।' आपका क्या ख्याल है मिसेज डिसूज़ा? क्या सचमुच आपको लगता है कि आगे की दुनिया ऐसी भयानक होगी जहां सारे गुण-अवगुण माने जाने लगेंगे?"

माफ कीजिएगा, मिसेज डिसूज़ा, कहीं मैं ज़रूरत से ज़्यादा तो नहीं बहक रही? लेकिन आपसे बातें करने के बहाने मैं इस दुनिया को समझने की कोशिश कर रही हूं.....पता नहीं, लोग कैसे अपने बारे में इतना विश्वास रख पाते हैं कि वे जो बोल रहे हैं, वह बिल्कुल सही है। मुझे तो हमेशा अपनी बात पर संदेह रहता है कि क्या पता यह उतनी सच न हो जितनी कि मैं समझ रही हूं। वंदिता जब भी मेरा गाना सुनती है, हमेशा लेट जाती है। मैंने जब शुरू में उसे टोका कि वह उठकर सुने, तो उसने पूछा, 'क्यों?' मैं इस 'क्यों' का कोई अच्छा-सा जवाब खोज नहीं पाई। क्या मालूम, हम जीने के जिन तरीकों को सही मानते हैं, वे

सही हैं या गलत.....आखिर तो ज़िन्दगी इतना बड़ा रहस्य है.....उसे जान पाना क्या इतना आसान है.....जो कहीं सही है, वही कहीं गलत है.....और फिर जैसी दुनिया में हम जी रहे हैं, उसे देखकर तो यह विश्वास करना और भी कठिन है कि हमारे तरीके सही हैं। कितनी दूरी है आदमी और आदमी के बीच में – कहीं रंग, कहीं धर्म, कहीं पैसा.....क्या सारी शिक्षा-दीक्षा, सभ्यता का अंतिम लक्ष्य उस चरम करुणा को पा लेना ही नहीं है जहां आदमी को दूसरे की पीड़ा अपनी पीड़ा जैसी लगने लगे? लेकिन ऐसा होता कहां है, मिसेज डिसूज़ा? अभी कुछ दिन पहले वंदिता ने मुझसे कहा, "मम्मी, यह राहुल मेरा छोटा भाई नहीं है, यह तो मेरा 'कज़िन' है।" राहुल वहीं खड़ा-खड़ा उसे ताक रहा था। मैं एक क्षण तो चुप रही कि उसे क्या कहूं। फिर मैंने उससे कहा, "यह कज़िन-वज़िन स्कूल में पढ़ने के लिए होता है। असल में हम जिसे प्यार करते हैं, वह हमारा अपना ही होता है। उसे 'कज़िन' नहीं कहते। राहुल तुम्हारा ही भाई है।" यह सुनकर वंदिता के चेहरे पर बहुत राहत दिखाई दी और वह राहुल का हाथ पकड़कर खेलने के लिए भाग गई।

मैं अब आपका ज़्यादा वक्त नहीं लूंगी, मिसेज डिसूज़ा! मैं सिर्फ आपसे इतना ही कहना चाहती थी मिसेज डिसूज़ा कि

अभी तक हम लोग जीवन को सही ढंग से जीने का 'फार्मूला' नहीं पा सके हैं.....जब तक हम उस नुस्खे को नहीं पा लेते जिससे हम इस दुनिया को एक बेहतर दुनिया बना सकें, तब तक हमें अपने प्रति एक संदेह भाव रखना ही होगा, हमें यह मानकर चलना होगा कि हम गलत भी हो सकते हैं। मेरी सहेली आभा अपनी मां के लगभग सैनिक अनुशासन में पलकर बड़ी हुई – फोन की घंटी दो बार से अधिक नहीं बजनी चाहिए, हर बात को एक बार में समझ लेना चाहिए, किसी चीज़ को लाने के लिए जो दराज़ खोलना बताया गया हो, उसके अलावा कोई दराज़ नहीं खुलना चाहिए। आभा में मानसिक सतर्कता और कम ऊर्जा में अधिक काम करने की क्षमता तो ज़रूर विकसित हुई, पर उसके अंदर जैसे सारे प्रश्न समाप्त हो गए.....वह एक भावहीन चेहरा लिए पति की आज्ञानुसार जीवन बिता रही है। अपनी ओर से कोई मज़ाक करना तो दूर, किसी हंसने की

बात पर वह हंसती नहीं। ऐसा लगता है जैसे उसके अंदर कुछ जमकर ठोस हो गया हो। उसे देखकर मुझे लगता है, मिसेज डिसूज़ा कि बहुत अधिक समय का पाबंद होने की कोई ज़रूरत नहीं होती.....हर समय किसी काम में लगे रहने की भी कोई ज़रूरत नहीं होती और न ही यह हिसाब लगाते रहने की कि किस काम से क्या फायदा होगा। इस डर के बावजूद कि आप मुझे सनकी और पागल समझ लेंगी, मैं आपको बताना चाहूंगी कि मैंने तो पाया है कि जीवन में आलस, फ़ुरसत और निकम्मापन भी कुछ मात्रा में होना ज़रूरी है.....ताकि आप रुककर देख सकें कि आप आखिर कहां जा रहे हैं। बस, इतना ही मैं आपसे कहना चाहती थी – मिसेज डिसूज़ा। पूरी तरह सच को तो कौन जान पाया है।

आपकी

सुस्मिता गुप्ता

यह कहानी, कहानी संकलन 'नौकरीपेशा नारी – कहानी के आईने में' से साभार।

किताब – नौकरीपेशा नारी कहानी के आईने में
प्रकाशक – सामयिक प्रकाशन
3543, जटवाड़ा
दरियागंज
नई दिल्ली – 110 002